जीवन मूल्य और साहित्य का अन्तर्सबन्ध

डॉ० कुसुम सिंह*
विमलेन्दु भूषण द्विवेदी*

जीवन और साहित्य का अटूट सम्बन्ध है। जीवन एक विस्तृत फलक है और साहित्य उसी का प्रतिबिम्ब। जीवन मूल्य का कैनवास यथार्थ जगत है और साहित्य उसी का एलबम। इस भांति जीवन मूल्य और साहित्य बोध दोनों एक–दूसरे के ही पर्याय हैं। एक अनुभव की प्रक्रिया है तो दूसरा अनुभूति का विषय। अनुभव बिना जीवन जीये नहीं मिल सकता और साहित्य बिना जीवन के।

जीवन मूल्य और साहित्य के अर्न्तसंबंध को जानने से पूर्व मूल्य और साहित्य के अर्थ को स्पष्ट कर देना आवश्यक है। 'मूल्य' शब्द संस्कृत की 'मूल' धातु में 'यत्' प्रत्यय लगाने से बना है। 'मूल्य' शब्द का अंग्रेजी 'Value' होता है। Value शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Valere' शब्द से हुई है, जिसका अर्थ 'अच्छा या सुन्दर' है। "मूल्य शब्द का अर्थ है वह मान, जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति, वस्तु या किसी सूक्ष्म सत्ता भाव, विचार आदि के गुण, योग्यता व महत्त्व को आँकते हैं।"[1] वस्तुतः उचित–अनुचित को निर्धारित करने के मानदण्ड ही मूल्य कहलाते हैं।

अर्थशास्त्र से परम्परागत रूप से सम्बन्धित 'मूल्य' शब्द अर्थशास्त्र के अतिरिक्त मनोविज्ञान, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, साहित्य–समीक्षा आदि विषय क्षेत्रों में व्यापक पैमाने पर व्यवहार में लाया जाता है। मनोविज्ञान में 'मूल्य' मानव की इच्छापूर्ति के सम्बन्ध में प्रयुक्त होते हैं। अर्बन के अनुसार, 'जो मानवीय इच्छा की पुष्टि करे वही मूल्य है, Value is that which satisfier human desires.[2] नीतिशास्त्र में 'मूल्य' शब्द का अर्थ, मानव के व्यवहारिक क्रियाओं में अच्छाई का मूल्य क्या है? के अन्तर्गत किया जाता है। डॉ0 प्रभाकर माचवे के अनुसार– "मानवीय क्रियाओं में, आचार–व्यवहार में, अच्छाई या शिवत्व का मूल्य क्या है, यही नीतिशास्त्र का विषय है।"[3] समाजशास्त्र में 'मूल्य' मानव समाज के विकास एवं मानवता के संवाहक तत्व के रूप में माना गया है, जबकि 'मूल्य मीमांसा दर्शनशास्त्र का विषय है।

(एसोसिएट प्रोफेसर),(शोधार्थी) म० गाँ० चि० ग्रा० वि० वि०, चित्रकूट, सतना, म०प्र०

भारतीय दर्शन में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को व्यक्ति की अस्मिता को सुस्पष्ट करने वाला आधार माना गया है। अस्तित्व मूल्य के आधार पर ही टिका होता है, इसलिए इन चारों आयामों को मूल्य के रूप में देखा जा सकता है। डॉ0 राजबली पाण्डेय चार पुरूषार्थों को ही जीवन मूल्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं– "जीवन के मूल्य चार हैं, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें धर्म और अर्थ साधन मूल्य हैं, मोक्ष साध्य है। अन्तिम दोनों में भी मोक्ष चरम लक्ष्य है। अतः सामान्य और विशिष्ट कर्त्तव्यों का विधान इन्हीं की प्राप्ति के लिए किया गया है।"[4] 'मूल्य' शब्द विज्ञान से भी जुड़ा हुआ है। विज्ञान के अभिशाप एवं वरदान दोनों पहलुओं ने मूल्य को प्रभावित किया।

यदि मूल्य की अवधारणा का विवेचन पाश्चात्य विचारधारा के परिप्रेक्ष्य में किया जाय तो स्पष्टतः यहां वर्तमान जीवन को ही सत्य माना गया है। पश्चिम के भोगवादी दर्शन में सुख को ही चरम मूल्य माना गया है।

वास्तव में 'मूल्य' शब्द जब जीवन के साथ जुड़ जाता है तो उसके भीतर मानवीय संवेदनाएं समाहित हो जाती है। किसी भी समाज के आदर्शों, मान्यताओं एवं रूढ़ियों का समुच्चय ही जीवन मूल्य है। "वस्तुतः जीवन के मूल्य वे होते हैं जो मानव के आरम्भिक रूप में उत्पन्न होने के बाद संसार पथ पर उठ खड़े होने व सफल अस्तित्व बनाये रखने के गुणों के रुप में विकसित होते हैं, जैसे–संघर्ष, साहस, उत्साह, शौर्य, शक्ति, उमंग, आत्मविश्वास आदि। और मानव मूल्य वे कहे जा सकते हैं जो मानव जीवन को व्यवस्थित, सुरक्षित, शालीन और सुन्दर बनाये रखने के लिए आवश्यक हैं, जैसे–मानवीय सहृदयता, सेवा, सहायता, धैर्य, क्षमा, उदारता, स्नेह, सहानुभूति आदि।"[5] इस प्रकार मूल्य सदैव मानवीय मूल्य ही होता है।

साहित्य, संस्कृति की एक अभिव्यक्ति होती है। 'साहित्य' में आकारात्व आदि के साथ 'य' प्रत्यय के योग से 'साहित्य' शब्द बना है। 'साहित्य' से तात्पर्य है 'मिलने का भाव'। संस्कृत काव्यशास्त्र में 'सहितस्य भावः इति साहित्यम्' कहा गया है। इसके अनुसार साहित्य में हित की भावना का होना अनिवार्य है। और यही हित की भावना प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मानव मूल्यों का निर्माण करती है।

साहित्य वह माध्यम है जिसके द्वारा साहित्यकार अपने भावों व विचारों को समाज में प्रसारित करता है। साहित्यकार के चिंतन–दर्शन एवं दृष्टि में सम्पूर्ण मानव जाति का हित निहित होता है। उसके अपने चहुँओर की घटनाएँ और दृश्य जब हृदय की परतों से छनकर अपने उत्कृष्ट व सार्थक रूप में अभिव्यक्त होते हैं तो उन्हें साहित्य कहा जाता है। इस प्रकार साहित्य मानव–समाज के विविध भावों एवं नित नवीन रहने वाली चेतना की अभिव्यक्ति है। किसी काल विशेष के साहित्य की जानकारी से तद्युगीन मानव–समाज को समग्रतः जाना जा सकता है। आचार्य

रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है....."।[6]

मूल्य समाज सापेक्ष होते हैं तथा साहित्य समाज का दर्पण होता है। अतः साहित्य और मूल्य का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। साहित्य और मानव मूल्यों के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए डॉ0 धर्मवीर भारती कहते हैं, "मानवीय मूल्य के सन्दर्भ में यदि हम साहित्य को नहीं समझते तो अक्सर हम ऐसी झूठी प्रतिमान योजना को प्रश्रय देने लगते हैं कि समस्त साहित्यिक अभियान गलत दिशाओं में मुड़ जाता है।"[7] इसी प्रकार साहित्य और समाज के सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए डॉ० धर्मवीर भारती कहते हैं, "साहित्य वर्तमान समाज–व्यवस्था का एक सांस्कृतिक अंग होता है। वह उस व्यवस्था से प्रभावित होता है और उसे प्रभावित करता है। समाज द्वारा मान्य नैतिक धारणाओं की कसौटी पर साहित्य को कसने का प्रयास नया नहीं है और न साहित्य से सामाजिक समस्याओं के समाधान माँगने का प्रयास ही नया है।"[8]

जीवन के शाश्वत मूल्यों–सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् तीनों की सामंजस्यपूर्ण प्रतिष्ठा ही साहित्य की सफलता को निश्चित करती है। एक सजग साहित्यकार जीवन मूल्यों के विविध पहलुओं को दृष्टिगत रख सृजन कार्य करता है। साहित्यकार को समाज का सर्वाधिक संवेदनशील व्यक्ति माना जाता है। साहित्य का इतिहास इस बात का गवाह है कि समाज में जब–जब मूल्यों में टकराहट हुआ है, तब–तब साहित्यकारों ने इनसे संघर्ष किया। हिन्दी साहित्य की बात करें तो आदिकाल में जब देश राजनैतिक अराजकता तथा धार्मिक उदण्डता से पीड़ित था, समाज में विश्रृंखलता आ गयी थी, अशिक्षित जनता साधु –सन्यासियों के श्रापों और वरदानों की ओर दृष्टि लगाये रहती थी, उस समय नरपतिनाल्ह, जगनिक, विद्यापति आदि साहित्यकारों ने इन समस्याओं से संघर्ष किया।

भक्तिकाल में मलिक मोहम्मद जायसी, कबीरदास, सूरदास, तुलसीदास आदि ने पतनोन्मुख मूल्यों से समाज को सचेत किया। तुलसीदास ने लोकमंगल की स्थापना की तो कबीरदास ने समाज की विद्रूपताओं को उजागर कर मूल्यों को बचाने का साहसिक प्रयास किया। ऐसे समय जब गुरू–शिष्य सम्बन्धों में पतन हो रहा था कबीरदास ने गुरू–महिमा का बखान किया–

कबीर सतगुर नौ मिल्या, रही अधूरी सीख।
स्वाँग जती का पहरि करि, धरि–धरि माँगे भीख।।[9]

विलास प्रधान युग रीतिकाल में रूढ़ियॉ एवं अंधविश्वास घर कर गये थे। यह सभ्यता एवं संस्कृति के साथ–साथ आर्थिक संकट का भी युग था। समाज

के लिए इस युग के साहित्य की महत्ता के सन्दर्भ में बिहारी के दोहों को देखा जा सकता है, जो गागर में सागर के समान है।

आधुनिक काल में मूल्य संघर्ष की स्थिति अधिक व्यापक ढंग से देखने को मिलती है। प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी के विकास ने जहॉ हमें विकास के चरण को एक कदम आगे बढ़ाया वहीं इस प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी की जाल में फँसकर मानव व प्रकृति दोनों ने अपना नियंत्रण खो दिया। ऐसे समय में साहित्यकारों ने एक कदम आगे बढ़कर ऐसे समस्याओं से समाज को अवगत कर सचेत किया तथा समाधान ढूढ़ने का प्रयास किया। सन्दर्भ के रूप में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, निराला, प्रसाद, पंत, महादेवी वर्मा, प्रेमचन्द, कृष्णा अग्निहोत्री, शिवानी, चित्रामुद्गल, नाशिरा शर्मा आदि का नाम आदर के साथ लिखा जा सकता है।

इस प्रकार जीवन मूल्यों की चर्चा किए बिना साहित्य का अस्तित्व कहीं भी नहीं है। जहाँ साहित्य है, वहाँ जीवन–मूल्य है। डॉ0 नेमिचन्द्र जैन साहित्य और मूल्यों के सम्बन्ध पर अपना मत व्यक्त करते हुए कहते हैं, "मूल्यों का प्रश्न वास्तव में साहित्य के उद्देश्य, अभिप्राय एवं धर्म की उपलब्धि से सम्बन्धित है। प्रत्येक युग में उद्देश्य किस भांति प्रतिफलित तथा रूपायित होते हैं, और अलग–अलग युगों में उनमें पायी जाने वाली विविधता के मूल स्रोत क्या हैं, साहित्य के मूल्यों की समस्या इसी खोज के साथ जुड़ी हुई है।"[10]

समाज परिवर्तनशील होता है इसलिए समाज के साथ–साथ मूल्य भी परिवर्तनशील होते हैं। यह परिवर्तन की प्रक्रिया प्राचीन काल से चली आ रही है। जैसे–जैसे हमारी सभ्यता एवं संस्कृति का विकास होता जा रहा है, वैसे–वैसे हमारे जीवन मूल्यों में परिवर्तन आता जा रहा है। यह दिगर की बात है कि इस प्रकार के परिवर्तन कभी सकारात्मक तो कभी नकारात्मक सिद्ध हुए। डॉ0 भगवान दास लिखते हैं, "मौत केवल प्राकृतिक कारणों से नहीं होती, प्राकृतिक मौत तो अनिवार्य होती है। जिसका डर प्रायः किसी को नहीं होता, डरकर भी कुछ लाभ नहीं। दूसरे प्रकार की मौत जो प्राकृतिक मौत से भी कहीं भयानक होती है, वह है जीवन सूत्रों से कट जाने की मौत। आज की पीढ़ी अपने लिए किसी भी मूल्य को चुनने का अधिकार नहीं रखती। उसकी स्वाधीनता (वैयक्तिक, मानसिक) खत्म हो चुकी है। इसी मौत के कारण आधुनिक पीढ़ी जीवन मूल्यों का विघटन अनुभव कर रही है और बेहूदी जिन्दगी व्यतीत करने के लिए मजबूर है।"[11]

आधुनिकता की चाह में मनुष्य पुरातन मूल्यों को छोड़ तो रहा है लेकिन नूतन मूल्यों को पूर्णरूप से आत्मसात् नहीं कर पा रहा है, ऐसे में उसकी स्थिति त्रिशंकू की भांति हो गई है, जो प्राचीन व नवीन मूल्यों के बीच संघर्ष कर रहा है। इस प्रकार के सामाजिक वातावरण में भारत जैसे विकासशील देश के मध्यम व

निम्न वर्ग कुछ ज्यादा ही घिस रहे हैं। ऐसे समय में मूल्य की शिक्षा अपरिहार्य व आवश्यक हो गई है। साहित्य शिक्षा की मूल प्रेरणा है और साहित्यकार द्वारा दी गई शिक्षा मानव के चिन्तन से कहीं अधिक उसके मर्म को प्रभावित करती है। "साहित्य का काम निराशा फैलाना नहीं, बल्कि वास्तविकता के निरूपण के साथ मंगल की नई शक्ति पर अटूट आस्था पैदा करना है।"[12]

इस प्रकार साहित्य के शिक्षण से मूल्य संक्रमण को रोकने के उपाय मूल्य और साहित्य के अर्न्तसंबंध को दर्शाते हैं। लेखक का दायित्व अच्छा साहित्य लिखना तो है ही उसे पाठकों तक पहुँचाना भी उसका प्रमुख दायित्व है। सोशल मीडिया आज इस कार्य में सार्थक सहयोग कर रही है।[13] हाल ही में साहित्य पाठकों के मामले में अव्वल बिहार के बड़हिया में युवाओं द्वारा मगही के कबीर 'मथुरा प्रसाद नवीन' की मूर्ति लगवाना समाज का साहित्य के साथ लगाव को दिखाता है।[14]

निष्कर्षतः साहित्य के मूल्य तथा जीवन दर्शन समाज से अभिन्न है। साहित्य तत्कालीन सामाजिक मूल्यों को ग्रहण करता हुआ नए जीवन मूल्यों की सृष्टि के जरिए समाज को गतिशीलता प्रदान करता है। इस प्रकार मूल्य और साहित्य का परस्पर अन्योनाश्रयी संबंध है।

संदर्भ सूची

1. डॉ॰ दीपा त्यागी व डॉ॰ प्रवेश सोती, जीवन मूल्य और साहित्य संगीत एवं कला, अनुबक्स मेरठ, 2012, पृ॰ 20
2. W.R. Urban, Fundamental of ethics, Page No. 16
3. डॉ॰ प्रभाकर माचवे, हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पृ. 658
4. डॉ॰ राजबली पाण्डेय, भारतीय नीति का विकास, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, वि॰ 2022, पृ॰ 2
5. डॉ॰ दीपा त्यागी व डॉ॰ प्रवेश सोती, जीवन मूल्य और साहित्य संगीत एवं कला, अनुबक्स मेरठ, 2012, पृ॰ 21
6. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, भूमिका
7. डॉ॰ धर्मवीर भारती, मानव मूल्य और साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2006, पृ॰ 109
8. वही, पृ॰ 106
9. डॉ॰ रामकिशोर शर्मा, कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2008, पृ॰ 115

10. नेमिचन्द्र जैन, बदलते परिप्रेक्ष्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 1968, पृ॰ 14
11. डॉ॰ दीपा त्यागी व डॉ॰ प्रवेश सोती, जीवन मूल्य और साहित्य संगीत एवं कला, अनुबक्स मेरठ, 2012 पृ॰ 192, डॉ॰ भगवान दास वर्मा, कहानी की संवेदनशीलताः सिद्धांत और प्रयोग
12. शंभुनाथ, बौद्धिक उपनिवेशवाद की चुनौती और रामचन्द्र शुक्ल, यात्री प्रकाशन, दिल्ली, 1993, पृ॰ 71
13. दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण– 6 दिसंबर 2015, पृ॰ 9
14. दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण, 17 जुलाई 2016, पृ॰ 9